# P.G.S NATIONAL COLLEGE OF LAW, MATHURA

**Paper -I** **Paper Name- Jurisprudence & Legal Theory** **Unit -4**

**Q1.सम्पत्ति अर्जित करने के विभिन्न तरीको को समझाइये ।**

**सामण्ड** के मतानुसार, सम्पत्ति कई तरीकों से अर्जित की जा सकती है। सम्पत्ति अर्जित करने के निम्नलिखित चार प्रमुख तरीके हैं। (1) आधिपत्य, (2) चिरभोगाधिकार, (3) अनुबन्ध, (4) उत्तराधिकार ।

**(1) आधिपत्य (Possession**) किसी भौतिक पदार्थ पर आधिपत्य होने से उस पर का हक उत्पन्न हो जाता है। यदि कोई व्यक्ति किसी ऐसी वस्तु पर आधिपत्य कर लेता है जो किसी भी व्यक्ति की सम्पत्ति न हो तो उस पर आधिपत्य रखने वाले व्यक्ति को उस वस्तु का स्वामित्व प्राप्त हो जाता है। यह आधिपत्य में ली गई वस्तु किसी अन्य की सम्पत्ति है तो आधिपत्य का हक उसके वास्तविक स्वामी को छोड़कर शेष अन्य सभी व्यक्तियों के विरुद्ध पूर्णरूप से आधिपत्यधारी का होगा। यदि किसी आधिपत्यधारी स्वामी को कोई व्यक्ति उसके आधिपत्यकृत वस्तु से दोषपूर्ण ढंग से वंचित कर देता है ऐसा स्वामी उस वस्तु को उस व्यक्ति से वापस ले सकता है, बशर्ते कि वह व्यक्ति उस वस्तु का वास्तविक स्वामी न हो।

**(2) चिरभोगाधिकार (Prescription)** - एक अवधि की समाप्ति के परिणामस्वरूप जिन अधिकारों का सृजन या विनाश होता है, उन्हें चिरभोगाधिकार कहते हैं अर्थात् जब कालावधि के समाप्त हो जाने के कारण किसी व्यक्ति को कोई अधिकार प्राप्त हो जाता है तो यह कहा जाता है कि उसे चिरभोगाधिकार प्राप्त हो गया है। चिरभोगाधिकार दो प्रकार के होते हैं-

(i) निश्चयात्मक या अर्जन- शील तथा

(ii) नकारात्मक या निर्वापक।

यदि कालावधि बीत जाने के फलस्वरूप अधिकार उत्पन्न हो जाता है तो उसे निश्चयात्मक या अर्जनशील चिरभोगाधिकार कहते हैं, परन्तु यदि कालावधि की समाप्ति से किसी अधिकार का नाश हो जाता है तो इसे नकारात्मक या निर्वापक चिरभोंगाधिकार कहते हैं।

**सामण्ड** के अनुसार, नकारात्मक अथवा निर्वापक चिरभोगाधिकार दो प्रकार के होते हैं (i) पूर्ण (Perfect) तथा (ii) अपूर्ण (Imperfect) |

पूर्ण नकारात्मक चिरभोगाधिकार में प्रधान अधिकार पूर्णत: नष्ट हो जाता है। अपूर्ण चिरभोगाधिकार में केवल कार्यवाही करने का अधिकार समाप्त हो जाता है तथा प्रधान अधिकार का अस्तित्व पूर्ववत् बना रहता है।

**(3) अनुबन्ध (Agreement)**-सम्पत्ति को अनुबन्ध द्वारा भी अर्जित किया जा सकता है। अनुबन्ध विधि द्वारा प्रवर्तनीय होता है तथा इसमें निम्नलिखित चार बातें होना आवश्यक होता है

(i) दो या दो से अधिक पक्षकार,

(ii) पक्षकारों की इच्छाओं की सहमति,

(iii) पक्षकारों को आपस में अनुबन्ध की सूचना, तथा

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

(iv) पक्षकारों के मध्य विधिक सम्बन्ध स्थापित किये जाने का आशय।

लोकलक्षी साम्पत्तिक अधिकार के रूप में अनुबन्ध दो प्रकार के हो सकते हैं- (1) समनुदेशन (Assignment) एवं (2) अनुदान (Grant) । समनुदेशन के अन्तर्गत एक स्वामी के वर्तमान अधिकार को दूसरे स्वामी को अन्तरित कर दिया जाता है। अनुदान के द्वारा अनुदाता के वर्तमान अधिकारों पर विल्लंगम के रूप में नये अधिकार सृजित किये जाते हैं। अनुबन्ध अनौपचारिक या औपचारिक हो सकता है। अनौपचारिक अनुबन्ध मौखिक होते हैं तथा औपचारिक अनुबन्ध लिखित होते हैं और इनका रजिस्ट्रीकरण और अन प्रमाणन कराना आवश्यक होता है।

**(4) उत्तराधिकार (Inheritance)** साम्पत्तिक अधिकार उत्तराधिकार से भी प्राप्त हो सकते हैं। अतः यह भी एक साधन है जिसके द्वारा सम्पत्ति अर्जित की जा सकती है। व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात् भी उसके कुछ अधिकारों का अस्तित्व बना रहता है तथा ये अधिकार मृतक के उत्तराधिकारियों को प्रत्यावर्तित हो जाते हैं। अतः वे अधिकार जो व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसके उत्तराधिकारियों को प्राप्त होते हैं, उत्तराधिकारी अधिकार कहलाते हैं। व्यक्ति की वसीयत शक्ति पर निम्नलिखित प्रतिबन्ध होते हैं

**(1) अवधि की परिसीमा (Limitation of time)** – कोई भी वसीयत करता सम्पत्ति को किसी शाश्वत अवधि तक निहित नहीं कर सकता है। वसीयतकर्ता को अपनी सम्पदा का निपटारा इस प्रकार करना चाहिए, ताकि वह उसके जीवन-काल तथा उसके बाद अठारह वर्ष से अधिक समय के लिए निहित न की गई हो।

**(2) धनराशि की सीमा (Limitation of amount)**-वसीयत करने वाले व्यक्ति को अपनी अ सम्पत्ति का कुछ भाग उन व्यक्तियों के लिए छोड़ना आवश्यक है, जिनकी देखभाल के लिए वह वि कि्तव्यबद्ध है।

**(3) उद्देश्य की सीमा (Limitation of Purpose)** कोई भी व्यक्ति अपनी वसीयत में यह उल्लेख कर सकता है कि उसके उत्तराधिकारी उत्तराधिकार में प्राप्त सम्पत्ति का उपयोग किन किन प्रयोजनों के लिए करेंगे, परन्तु वह अपनी वसीयत में इस प्रकार का कोई निर्देश नहीं दे सकता है जो जनहित के विरुद्ध हो।

**Q2. विधिक व्यक्ति सम्बन्धी विभिन्न सिधान्तो की विवेचना कीजिये ।**

**निगमित व्यक्तित्व के सिद्धान्त (Theories of Corporate Personality)** - निगमित व्यक्तित्व के स्वरूप के विषय में विद्वानों में बड़ा मतभेद रहा है फिर भी इस सम्बन्ध में विभिन्न विधिवेत्ताओं के विचारों को निम्नलिखित सिद्धान्तों के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है

(i) परिकल्पना सिद्धान्त,
(ii) यथार्थता सिद्धान्त,
(iii) कोष्ठक सिद्धान्त,
(iv) रियायत सिद्धान्त, (v) प्रयोजन सिद्धान्त ।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

**(i) परिकल्पना सिद्धान्त (Fiction Theory)**- इस सिद्धान्त के समर्थक सैविग्नी, हालैण्ड ग्रे, केल्सन तथा सामण्ड हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार, निगमित व्यक्तित्व एक विधिक कल्पना मात्र है, जिसका प्रमुख उद्देश्य सामूहिक रूप में एकत्रित हुए व्यक्तियों के अस्थिर संगठन में एकता लाना है। इसलिए यह कल्पित व्यक्तित्व उन व्यक्तियों के वास्तविक व्यक्तित्व से भिन्न होता है जो इसका सृजन करते हैं। सैविग्नी के विचारानुसार, सभी निगमों का मुख्य लक्षण यह है की अधिकार का विषय न तो उसके सदस्यों में अलग-अलग विद्यमान रहता है और न ही उन सदस्यों के योग में। वस्तुतः वह समूचे निगम में निहित रहता है। इसका परिणाम यह है कि सदस्यों के परिवर्तन से निगम के अस्तित्व या उसकी एकता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

**प्रो. ग्रे के अनुसार**, निगम का मुख्य उद्देश्य सामान्य हेतु रखने वाले व्यक्तियों के हितों का संरक्षण करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति निगम को कल्पित व्यक्तित्व प्रदान करके ही की जाती है निगम की अपनी कोई वास्तविक इच्छा नहीं होती है, क्योंकि निगम वास्तविक व्यक्ति नहीं होता हैं। निगम की इच्छा एक काल्पनिक इच्छा होती है जो कि विधि द्वारा सौपी जाती है।

**(ii) यथार्थता सिद्धान्त (Realistic Theory)** - इस सिद्धान्त को प्रसिद्ध जर्मन विधिशास्त्री गियर्के ने प्रतिपादित किया था। गियर्के के मतानुसार निगम का अस्तित्व अपने सदस्यों के सामूहिक स्वरूप से भिन्न होता है। निगम का व्यक्तित्व कल्पना के आधार पर नहीं होता है, बल्कि इसका एक वास्तविक अस्तित्व होता है, जिसको कि राज्य तथा विधि मान्य करते हैं। जब बहुत से व्यक्ति सामूहिक रूप से मिलकर निगम की स्थापना करते हैं तो इस प्रकार के मिलाप के परिणामस्वरूप एक नई इच्छा का प्रादुर्भाव होता है जो कि उस निगम की इच्छा कहलाती है निगम अपनी इच्छा अपने कर्मचारियों, निदेशकों तथा प्रतिनिधियों के कार्यों के माध्यम से व्यक्त करता है।

इस सिद्धान्त के समर्थकों का विचार है कि सामूहिक व्यक्तित्व एक वास्तविकता है न की कोरी कपोल कल्पित कल्पना। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि निगम एक वास्तविक व्यक्ति है उसकी वास्तविकता तो मनोवैज्ञानिक वास्तविकता है न कि भौतिक प्रो. ग्रे, ने इस सिद्धान्त की भ्रामक निरूपित करते हुए कहा है कि यथार्थ में सामूहिक इच्छा एक कोरी कल्पना के अलावा और कुछ नहीं है।

**(iii) कोष्ठक सिद्धान्त (Bracket Theory)** – इस सिद्धान्त के प्रमुख समर्थक इहरिंग उनके अनुसार, निगम के सदस्य ही वास्तविक है। निगम के रूप में सृजित "विधिक व्यक्ति एक कोष्ठक के समान है जो कि केवल सदस्यों के एकत्रित स्वरूप को प्रदर्शित करता है। निगम के माध्यम से उसके सदस्यों के सामान्य हितों को कार्यान्वित करने में सुविधा होती है।

कोष्ठक सिद्धान्त के समर्थकों के अनुसार, जिस प्रकार किसी शब्द के दूसरे पर्यायवाची शब्द को कोष्ठक में रखकर व्यक्त किया जाता है, ठीक उसी तरह विधि द्वारा विभिन्न व्यक्तियों के सामूहिक रूप को "निगमन" द्वारा अभिव्यक्त किया गया है एवं उनके अनेक रूपों को एकरूपता प्रदान की गई है। अत: निगमन का सृजन केवल सुविधामात्र के लिए किया जाता है।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

(iv) **रियायत सिद्धान्त (Concession Theory)** –इस सिद्धान्त को सैविग्नी ने प्रतिपादित किया था। उनके मतानुसार, राज्य का प्रभुसत्ता सम्पन्न प्रधान तथा अन्य व्यक्ति ही यथार्थ रूप में व्यक्ति होते हैं। शेष संघ तथा संस्थाएँ प्रभुसत्ता सम्पन्न प्रधान से ही व्यक्तित्व प्राप्त करते हैं और इस कारण प्रधान द्वारा प्रदान की जाने वाली रियायत के अनुसार इनको वैधानिक अस्तित्व प्राप्त होता है।

**(v) प्रयोजन सिद्धान्त (Purpose Theory)**–प्रयोजन सिद्धान्त से आशय यह है कि निगमों को केवल कुछ प्रयोजनों के लिए ही व्यक्ति मान लिया जाता । यह सिद्धान्त इस मूलभूत धारणा पर ही आधारित है कि अधिकारों तथा कर्त्तव्यों की विषय वस्तु केवल वास्तविक मनुष्य ही हो सकते हैं। किसी निर्जीव वस्तु में व्यक्तित्व का आरोपण करना उचित नहीं है। अतः इस सिद्धान्त के अनुसार निगमों का व्यक्तित्व वास्तविक न होने के कारण उनमें कर्त्तव्यों तथा अधिकारों को धारण करने की क्षमता नहीं होती है। इसी कारण से वे केवल विषय रहित अस्तित्व रखते हैं। जिन्हें कुछ प्रयोजनों के लिए व्यक्ति मान लिया जाता है।

**Q3. सम्पत्ति की अवधारणा की विवेचना कीजिये । सम्पत्ति की विभिन्न प्रकारो को समझाइये ।**

**सम्पत्ति (Property)** - सामान्यतः सम्पत्ति से अभिप्राय उस वस्तु से है, जिस पर कि स्वामित्व के अधिकार का प्रयोग किया जा सकता है। स्वामित्व के अधिकार का प्रयोग प्रायः मूर्त वस्तुओं पर ही किया जाता है। सामण्ड के मतानुसार, "सम्पत्ति शब्द का अर्थ लोकलक्षी साम्पत्तिक अधिकारों से है। " लोकलक्षी अधिकार से तात्पर्य इस प्रकार के अधिकारों से है जो किसी व्यक्ति को समस्त मानव वर्ग के विरुद्ध प्राप्त होते हैं। विधि के अधीन सम्पत्ति शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया गया है। कभी इसको स्वामित्व के अर्थ में प्रयोग किया जाता है तो कभी स्वत्व के रूप में। कभी-कभी तो वे सभी वस्तुएँ जो किसी व्यक्ति के पास हैं उनकी सम्पत्ति मानी जाती हैं। सामण्ड के अनुसार, विधि के अन्तर्गत सम्पत्ति शब्द का प्रयोग निम्नलिखित सन्दर्भों में किया जा सकता है।

**(1) समस्त विधिक अधिकार (All Legal Rights)**- इस सन्दर्भ में सम्पत्ति के अन्तर्गत व्यक्ति के समस्त विधिक अधिकार शामिल हैं। यहाँ तक कि मनुष्य का स्वयं का जीवन, उसके हाथ-पैर, स्वतन्त्रता आदि सभी उसकी सम्पत्ति होती हैं, परन्तु वर्तमान में सम्पत्ति शब्द का प्रयोग इस अर्थ में नहीं किया जाता है।

**(2) साम्पत्तिक अधिकार (Proprietary Rights)** – इस अर्थ में सम्पत्ति के अधीन व्यक्ति के व्यक्तिगत अधिकारों का समावेश नहीं होता है, बल्कि केवल साम्पत्तिक अधिकार ही उसकी सम्पत्ति कहलाते हैं। अतः व्यक्ति की भूमि, कम्पनी में उसके अंश आदि ही उसकी सम्पत्ति हैं।

**(3) लोकलक्षी साम्पत्तिक अधिकार (Proprietary Rights in Ren.)**- सम्पत्ति के अन्तर्गत व्यक्ति के सभी साम्पत्तिक अधिकार नहीं आते हैं, वरन् केवल इस प्रकार के साम्पत्तिक अधिकार ही आते हैं जो लोकलक्षी रूप के होते हैं अतः किसी व्यक्ति का प्रतिलिप्याधिकार (Copy rights) उसकी सम्पत्ति है।

**(4) मूर्त सम्पत्ति (Corporeal Property)**--संकीर्ण अर्थ में सम्पत्ति के अन्तर्गत भौतिक वस्तुओं पर स्वामित्व के अधिकार के अलावा किसी अन्य अधिकार का समावेश नहीं किया जा सकता है। बेन्थम के सम्पत्ति ने इसी अर्थ को उचित माना है।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

**(5) सम्पत्ति के विभिन्न प्रकार (Different Kinds of Property)**–सामान्य रूप से सम्पत्ति दो प्रकार की होती हैं—(1) मूर्त सम्पत्ति (Corporeal Property), एवं (2) अमूर्त सम्पत्ति (Incorporeal Property )।



भौतिक वस्तुओं में स्वामित्व के अधिकार को मूर्त सम्पत्ति कहते हैं। इसके विपरीत समस्त मानव वर्ग के विरुद्ध प्राप्त होने वाले अन्य सामपत्तिक लोकलक्षी अधिकार अमूर्त सम्पत्ति कहलाते हैं। अमूर्त सम्पत्ति को पुनः दो भागों में बाँटा गया है। सम्पत्ति के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण नीचे दिया गया है

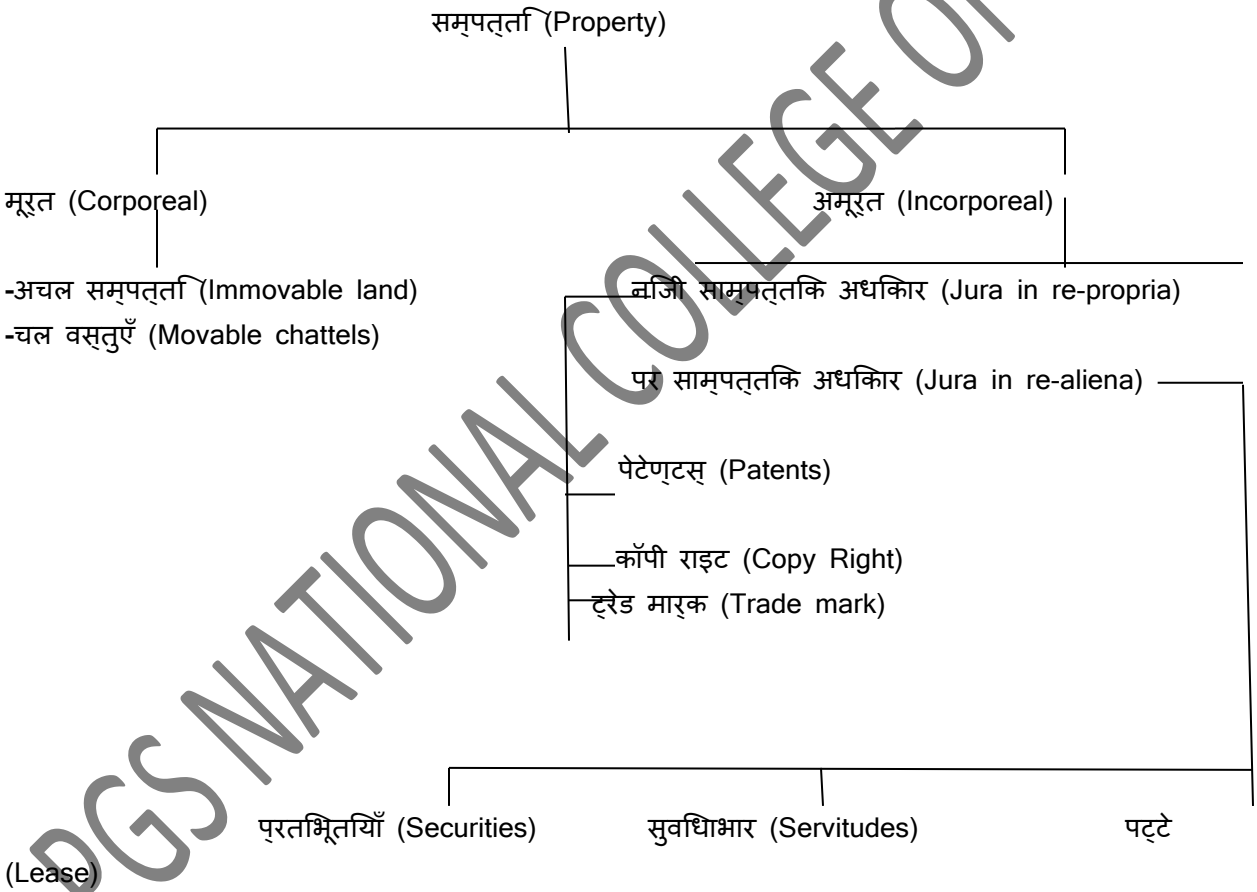


**मूर्त तथा अमूर्त सम्पत्ति (Corporeal and Incorporeal Property)**–मूर्त सम्पत्ति को पार्थिव या भौतिक सम्पत्ति तथा अमूर्त सम्पत्ति को अपार्थिव सम्पत्ति कहते हैं। मूर्त सम्पत्ति वह सम्पत्ति होती हैं जिनकी कि अनुभूति ज्ञानेन्द्रियों द्वारा हो सकती है। जैसे- शूमा, मकान, रुपये, पैसे आदि मनुष्य की सम्पत्ति हैं। अमूर्त सम्पत्ति वह सम्पत्ति है जिसकी अनुभूति ज्ञानेन्द्रियों से नहीं हो कती है- उदाहरण के लिए, ऋणाधिकार, सुखाधिकार प्रतिलिपियाधिकार इत्यादि।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

सम्पात के इस विभाजन को रोमन विधिशास्त्रियों ने भी स्वीकार किया था। उनके मतानुसार, इस प्रकार की सभी वस्तुएँ जो दृश्यमान हैं मूर्त वस्तुएँ मानी जाती थीं तथा जो दृश्यमान नहीं थीं अमूर्त वस्तुएँ कहलाती थीं, किन्तु



बर्कलैण्ड का मत है कि रोमन विधि के अधीन मूर्त वस्तुओं क अभिप्राय केवल स्वामित्व से होता था तथा अन्य सभी वस्तुएँ जिनका मूल्यांकन द्रव्य में किया जा सकता था, अमूर्त वस्तुएँ कहलाती थीं।

**चल या अचल सम्पत्ति (Movable and Immovable Property)—**मूर्त वस्तुओं को चल एवं अचल सम्पत्तियों में वर्गीकृत किया गया है। भूमि अचल सम्पत्ति कहलाती है, जबकि एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जायी जा सकने वाली वस्तुएँ चल सम्पत्ति कहलाती हैं। सामण्ड के मतानुसार, अचल सम्पत्ति के निम्नलिखित लक्षण होते हैं

(i) किसी भूखण्ड के ऊपरी सतह का निश्चित भाग,
(ii) उस भूखण्ड की बाहरी सतह के ऊपर नभ मण्डल का भाग,
(iii) उस भूखण्ड की बाहरी सतह की निचली जमीन जहाँ तक कि भूमि का केन्द्र बिन्दु है,
(iv) पृथ्वी से संलग्न या सम्बन्ध रखने वाली सभी चीजें; जैसे-मकान, दीवाल, दरवाजे आदि
(v) वे सभी वस्तुएँ जो बाहरी सतह के ऊपर या निचले भाग में अपने प्राकृतिक रूप में विद्यमान हैं।

**अभौतिक वस्तुओं पर निज साम्पत्तिक अधिकार (Right in re-propria in immaterial अनुसार things)** - साम्पत्तिक अधिकार अभौतिक एवं भौतिक दोनों वस्तुओं पर होता है। साकार पदार्थ भौतिक वस्तु होती है। भौतिक वस्तुओं के अलावा अन्य सभी वस्तुएँ अभौतिक कहलाती है। सम्पत्ति विधि का अधिकतर सम्बन्ध भौतिक वस्तुओं से होता है, परन्तु सामण्ड के, मानवीय कौशल तथा श्रम से व्युत्पन्न विभिन्न अभौतिक पदार्थ भी अधिकारों की विषय वस्तु के रूप में मान्य हैं। मानव के मस्तिष्क से जो अभौतिक उत्पाद निर्मित होते हैं वे आपके लिए मूल्यवान होते हैं। इसलिए विधि के अनुसार, ऐसे अभौतिक उत्पादों पर व्यक्ति का साम्पत्तिक अधिकार होता है इसके निम्नलिखित रूप हो सकते हैं

(i) पेटेण्ट, (ii) प्रतिलिप्याधिकार, (iii) ट्रेड मार्क।

**परसाम्पत्तिक अधिकार (Right in ro-aliena)–परसाम्पत्तिक अधिकार के निम्नलिखित प्रकार होते हैं**

(i) प्रतिभूतियाँ, (ii) सुविधाभार, (iii) पट्टे ।

**(i) प्रतिभूतियाँ (Securities)** – यह एक प्रकोर का विल्लंगम है। इसका प्रयोजन उसी व्यक्ति में निहित किसी अन्य अधिकार के उपभोग की सुविधा प्रदान करना है। सामान्य रूप से ऋण के भुगतान को निश्चित करने के लिए प्रतिभूति ली जाती है। प्रतिभूतियों के भी दो प्रकार होते हैं

(1) बन्धक (Mortgage), तथा (2) धारणाधिकार (Lien) ।

जब ऋणी व्यक्ति की चल सम्पत्ति उसके द्वारा लिये गये ऋण के भुगतान को निश्चित करने के लिए प्रतिभूति के रूप में लेनदार को अन्तरित कर दी जाती है तो बन्धक कहा जाता है। धारणाधिकार में चल सम्पत्ति ऋणी में निहित रहती है, परन्तु उस पर लेनदार के हित में विल्लंगम कर दिया जाता है ।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW

**(ii) सुविधाभार (Servitude)** - यह एक इस प्रकार का विल्लंगम है, जिसमें भूमि का सीमित उपयोग करने का अधिकार होता है। इस अधिकार में भूमि का कब्जा नहीं होता है। इसमें भूमि पर न तो स्वामित्व होता है और न



ही कब्जा, बल्कि उसके उचित एवं वैध उपयोग का अधिकार रहता है। सुविधाभार निजी तथा सार्वजनिक दोनों रूप में हो सकता है। निजी सुविधाभार निश्चित व्यक्ति में निहित होता है, जबकि सार्वजनिक सुविधाभार वह है जो जनसाधारण या अनिश्चित व्यक्तियों में निहित होता है।

**(iii) पट्टा (Leases)** – इसको अभिवृत्ति (tenancy) भी कहते हैं। पट्टे के अन्तर्गत भूमि की अभिवृत्तियाँ, जंगम वस्तुओं के सभी प्रकार के उपनिधान (bailment) तथा अमूर्त सम्पत्ति के सभी विल्लंगम आते हैं। जब कोई व्यक्ति इस प्रकार की सम्पत्ति पर जिसका स्वामी कोई दूसरा ही व्यक्ति होता है, कब्जे का तथा उसके उपयोग का अधिकार रखता है तो इस प्रकार के अधिकार को पट्टा कहते हैं। भूमि को पट्टे पर देने वाला व्यक्ति भूमि का स्वामी होता है, जिसे पट्टा (lesser) कहते हैं एवं जिस व्यक्ति को उस भूमि का पट्टा दिया जाता है, वह पट्टेदार (lessee) कहलाता है। पट्टेदार भूमि पर कब्जा रखता है तथा उसका उपयोग करता है, परन्तु उसका स्वामी नहीं होता है। पट्टे की समयावधि अधिकार की अवधि से अधिक नहीं हो सकती है।

PGS NATIONAL COLLEGE OF LAW